ISSN–2278-5655

AMIERJ

AARHAT MULTIDISCIPLINARY INTERNATIONAL EDUCATION RESEARCH JOURNAL
Volume–X, Issues– III May - June 2021

श्रीराम परिहार के 'पानी है अनमोल' निबंध में चित्रित व्यंग्यात्मकता

डॉ. सिध्देश्वर वि. गायकवाड
सहयोगी प्राध्यापक व हिंदी विभाग प्रमुख
भारतीय जैन संघटना का कला, विज्ञान व वाणिज्य महाविद्यालय, वाघोली
ता.हवेली जि. पुणे.

Aarhat Publication & Aarhat Journals is licensed Based on a work at *http://www.aarhat.com/amierj/*

प्रस्तावना:

निबंध आधुनिक हिंदी गदय की महत्वपूर्ण विधा है। प्राचीन षरतीय साहित्य में निबंध का वर्तमान स्वरुप प्राप्त नहीं है। षरतीय साहित्य में निबंध शब्द अनेक अर्थों में प्रयुक्त हुआ है। किसी विषय पर अपने विचार प्रकट करने का प्रयास ही निबंध है। निबंध का शाब्दिक अर्थ है– सूत्रों में आबद्ध, गठी हुई रचना। निबंध शब्द मूलत: संस्कृत का है, जिसका अर्थ है बाँधना या श्रृखला बध्द करना। निबंध के जन्मदाता फ्रांसीसी लेखक माइकेल द. मोन्तेन हैं। प्रसिध्द आलोचक डॉ. श्यामसुदर दास ने लिखा है–"निबंध उस लेख को कहना चाहिए जिसमें किसी गहन विषय पर विस्तारपूर्वक और पाण्डित्यपूर्ण विचार किया गया हो।"[१] आ. रामचंद्र शुक्ल निबंध की व्याख्या करते हुए लिखते हैं–"यदि गदय कवियों या लेखकों की कसोटी है तो निबंध गदय की कसौटी है। षषा की पूर्ण शक्ति का विकास निबंधों में ही सबसे अधिक संभव होता है।"[२] निबंध की प्रमुख विशेषताओं में है कसावट, स्वत:पूर्णता, सम्बध्दता, प्रवाह, भाषा तथा उद्देश आदि। विषय निरूपण एकसूत्रता, व्यक्तित्व का अन्तर्भाव तथा कलात्मकता का समावेश निबंध के प्रमुख तत्वों में होता है। निबंध के प्रमुख प्रकारों में वर्णनात्मक, विवरणात्मक, विचारात्मक, भावात्मक, ललित, वैयक्तिक, व्यक्ति प्रधान, व्यक्तिनिष्ठ आदि आते हैं। निबंध विधा ने आज आशातीत प्रगति की है।

श्रीराम परिहार जी इक्कीसवी शती के श्रेष्ठ निबंधकार हैं। उच्च शिक्षित डॉ. परिहारजीने अपने ललित निबंधों से समकालीन निबंधकारों के बीच एक अलग पहचान बनायी है। सरल और सरस भाषा में लिखित इनके निबंध पाठकों के बीच बहुत लोकप्रिय हैं। अपने निबंधों में उन्होंने समाज और वर्तमान स्थितियों पर पैने व्यंग्य भी किए हैं। भाषा में सजीवता लाने के लिए इन्होंने स्थानीय शब्दों का भी प्रयोग किया है। श्रीराम परिहार जी साधारण विषयों को भी अपने अनुभव एवं गहन अध्ययन से सार्थक एवं चिंतनीय बनाते हैं। निबंध के अतिरिक्त उन्होंने गीत और समीक्षात्मक पुस्तकों का भी सृजन किया है, एक निबंधकार के रुप में परिहार जी का हिंदी साहित्य

ISSN–2278-5655

AMIERJ

AARHAT MULTIDISCIPLINARY INTERNATIONAL EDUCATION RESEARCH JOURNAL
Volume–X, Issues– III May - June 2021

जगत में महत्वपूर्ण स्थान है। उनके चर्चित निबंध संग्रहों में हैं– आँच अलाव की, अंधेरे में उम्मीद, धूप का अवसाद, बजे तो वंशी गूँजे तो शंख, ठिठके पल पाँखुरी पर, रसवंती बोलो तो, झरते फूल हरसिंगार के, हंसा को पुरातन बात आदि।

'पानी है अनमोल' परिहार जी का अत्यंत चर्चित एवं मार्मिक ललित निबंध है। जिसमें उन्होंने हमारी परंपरा, सभ्यता के साथ वर्तमान स्थितियों का सजीव चित्रण किया है। प्रस्तुत निबंध में निबंधकार ने आधुनिक जीवनशैली के फलस्वरुप पानी के व्यापारीकरण, उसका पाउच बंद होकर बिकना, व्यवसाय की वस्तु बनना आदि बातों पर मार्मिक टिप्पणी की है। मनुष्य का शरीर पंचतत्वों से बना है। यानी की बगैर पानी मनुष्य जीवित नहीं रह सकता। किंतु यही पानी आज व्यापार की वस्तु बन गया है। दूसरों को पानी पिलाना पुण्य का काम है किंतु आज पानी बेचकर धन कमाया जा रहा है, यह बडा ही दुर्भाग्यपूर्ण है। इसलिए लेखक अत्यंत दुखी मन से कह उठते हैं कि मनुष्य तू कितना सत्यनाशी है। पानी प्राकृतिक देन है। मनुष्य का सहज स्वभाव यह है कि जो उसे असानी से मिला है उसका मूल्य वह समझ ही नहीं पाया है। आज अर्थ के पीछे वह इतना अंधा हुआ है कि प्राकृतिक संपदा को वह अपने फायदे के लिए बेच रहा है। इन सबके बीच हमारी संस्कृति नष्ट हो रही है, इस ओर उसका ध्या नही नहीं है।

निबंधकार अपनी सांस्कृतिक परंपरा का प्रतिपादन करते हुए कहते हैं कि कैसा जमाना आया है कि जिस देश में दूध– दही नहीं बिकता था, वहाँ अब पानी बिक रहा है। एक समय था कि गर्मी से बचने हेतु लोग जगह–जगह प्याऊ खुलवाते थे। पथिक की प्यास बुझे और उसकी आत्मा तृप्त होकर आशिष दे। यहीं भावना मन में होती थी कि कोई भी पानी के लिए कष्ट सहन न करें। किंतु समय के साथ सारी चीजें परिवर्तित हुई। अब पानी बिक रहा है। हम नर्मदा नदी के पानी को अमृत मानकर उसका आचमन करते थे, अब जल–माफिया उसी पानी को अपनी संपत्ति समझकर बेच रहे हैं। आज के खुदगर्ज व्यक्ति की यह करतूत अत्यंत निंदनीय है, यह घोर आत्मघात है। स्वार्थ केंद्रित मनोवृत्ति ने उसे मानव से शैतान बना दिया है। पहले राजा सडक बनवाने के साथ पेड लगाना और जगह–जगह कुएँ–बावडियाँ खुदवाकर यात्रियों के जीवन के पानी को सुरक्षित रखते थे। आज पाइप लाइनों में बंद होकर पानी कारखानों में जा रहा है तथा पाउच और बोतलों में बंद होकर बाहर आ रहा है। यह मनुष्य की जल–प्राप्ति के नैसर्गिक अधिकार का हनन नहीं तो और क्या है।

परिहार जी जेठ की गर्मियों में मोटर से संफर करते हुए अनुभव करते हैं कि भरी दोपहरी में बिजली के तार पर नीलकंठ बैठा है। उदास और चुप। वह धरती पर मौसम की चुनौती को स्वीकारते हुए जीवन के पानी को बचाए हुए है। यह नीलकंठ भारतीय जन का सच्चा प्रतिनिधि मालूम होता है, क्योंकि वह व्यवस्था को मौन रहकर सहता है और व्यवस्था से उपजी आँच को चुनौती भी देता है। आज का सामान्य व्यक्ति अपने अधिकारों एवं जिम्मेदारियों के प्रति जागरुक नहीं है, इस ओर लेखक इशारा करते हैं। निबंध लेखक नर्मदा के बहते हुए पानी को जीवन वाही संस्कृति मानते हुए मन ही मन नतमस्तक होते हैं, किंतु थोडा आगे बढने पर पाउच तथा बोतलों में बंद पानी को देख उनका सारा दर्शन जमीन पर आ जाता है। यहाँ परिहार जी वर्तमान समय का वास्तव चित्र

ISSN–2278-5655

AMIERJ

AARHAT MULTIDISCIPLINARY INTERNATIONAL EDUCATION RESEARCH JOURNAL
Volume–X, Issues– III May - June 2021

हमारे सम्मुख उपस्थित करते हैं। आज भी निमाड के दो गाँव ऐसे हैं जहाँ दूध और दही नहीं बिकता, लेकिन अन्य जगहों पर पानी बिक रहा है। यह बडी विचित्र विडंबना है। परंतु आज के भारत का यह यथार्थ रूप है, जिसे नई संस्कृति कहा जाएगा।

दुर्भ्याग्यपूर्ण बात यह है कि आनेवाले समय में झीलें नीलाम होंगी, तालाबों पर पानी के उदयोगपतियों का कब्जा होगा। नदियों के घाटों पर कंपनियों के नामपट्ट और चेतावनी लिखी होगी कि यह घाट और इसका पानी अमुक की संपत्ति है। तब नदी स्नान और अनुष्ठान धरे रह जाएँगे। यानी की आपके पास पैसा है तो पानी खरीद लीजिए, नहीं तो प्यासे मर जाइए। वैसे भी धरती पर बहुत भार बढ गया है। फिर गरिबों को क्या पानी और क्या मौत? महत्ता तो धनपतियों की है। जो दूसरों के जीवन का पानी मारकर अपना पानी बचाने में लगे हैं। यह जल–माफिया चंबल के बीहडों में नहीं महानगरों के जंगल में डकार रहे हैं। निबंधकार यहाँ व्यंग्यात्मक रुप में समझा रहे हैं कि कैसे हम ही हमारी दुर्गति के लिए जिम्मेदार है। जिसे हम विकास और प्रगति कह रहे हैं असल में वह हमें अंत की ओर ले जा रहा है। इसलिए आज हमें अपनी सोच तथा व्यवहार को बदलना बडा आवश्यक प्रतीत होता है। समाज दर्शन और विकास का आधार पानी है। यही कारण है कि हमारी सभ्यताएँ नदी की घाटियों में बसती है। लेखक कहते हैं कि पानी प्राकृतिक उपहार था, स्वच्छंद था, बोतलबंद नहीं। वह जीवन की प्यास था, त्रास नहीं। वह आम था, खास नहीं। वह सहज था, दुष्कर नहीं। पानी बहता था, स्थिर नहीं। किंतु खोखली सभ्यता और आदर्शों ने हमें (मनुष्य को) जानवर बना दिया। आज अधिक पाने की प्रवृत्ति ने मनुष्य को संवेदनशील, मूल्यहीन, जडवत बनाया है। धन के लालची लोगों के संबंध में भारत भूषण जी कहते हैं–

"इस मनुष्य को धन की ये अन्धी दौड कहाँ ले जायेगी
शायद सोने की ईटों में, जिन्दा–जिन्दा चितवाएगी।"[३]

एक समय था कि अगर बाजार में अनाज, फल आदि के दाम गिर जाने पर उसके लिए पानी के मोल बिक गया ऐसा कहा जाता था किंतु आज किसान की फसल से अधिक मोल कारखानों में बनी पानी की बोतल का है। क्योंकि अनाज का मोलभाव किसान नहीं तय करता किंतु पाउच बंद पानी का मोलभाव उत्पाद कंपनी निर्धारित करती है। यह वास्तव में चिंतनीय बात है। प्रस्तुत निबंध इसी ओर इशारा करता है। आज यह वैश्विक समस्या बन गई है इस पर मिल–जुलकर विचार–विमर्श होना आवश्यक है।

आज हमारे पास पानी के अनेक संदर्भ है। हमारी परंपरा घर की छत या आँगन में रस्सी से जलपात्र लटकाकर पंछियों को पानी पिलाती है। चाहे पथिक हो या अमीर खुसरो पनघट पर पानी पीकर तृप्त ही होता था। प्यासे को पानी पिलाना और पथिक को रोककर उससे वार्तालाप करना मानवता का दयोतक था, जिसमें पुण्य की खोज की जाती थी। वह पथिक उसके साथ हुए व्यवहार को दोहराता था, जिससे संस्कृति निरंतर प्रवाहमान रहती थी। इससे संस्कृति का विस्तार होता था। रहीम इस संबंध में लिखते हैं–

"रहिमन पानी राखिए बिन पानी सब सून।

ISSN–2278-5655

AMIERJ

AARHAT MULTIDISCIPLINARY INTERNATIONAL EDUCATION RESEARCH JOURNAL
Volume–X, Issues– III May - June 2021

पानी गए न उबरे, मोती मानुस चून।।"[४]

निबंधकार कहते हैं खरीदा हुआ पानी और खरीदी हुई संस्कृति से जीवन न तो चलता है और न ही सँवरता है। विकास के नाम पर आज हम जो महसूस कर रहे हैं, वह बेकार है। हमने धरती का मोलभाव किया, वायुमंडल को जहरीले गैसों से भर दिया, आग को भारी दामों में बेचना शुरु कर दिया। आज का मानव प्रतिभा संपन्न है, ज्ञानी है किंतु इसी बौध्दिक अपच और अमर्याद धनलिप्सा ने मनुष्य को पागल बना दिया है। लेखक कहते हैं–"सोच! पनी बेचकर क्या तू जीवन में पानी बचा सकेगा? यह कार्य होगा वर्षा–जल के अधिकाधिक संग्रहण और उसके उचित उपयोग से। वो देख! उधर काली घटा घिरने लगी है।"[५] यहाँ निबंधकार आशावाद व्यक्त करते हुए, परिस्थितियों को बदलने का आवाहन करते हैं।

निष्कर्षत:

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि प्रस्तुत ललित निबंध में श्रीराम परिहार जी ने सरल भाषाशैली में पानी के व्यापार से, अर्थकेंद्रित सभ्यता के विकास से, तेजी से लुप्त होती जा रही लोक परंपरा के प्राण तत्वों–जिनमें आस्था, श्रध्दा और विश्वास के विघटन को अभिव्यक्त किया है। इन गलत धारणाओं और स्वार्थ केंद्रित मानसिकता के कारण निबंधकार का संवेदनशील मन व्यथित और भावविभोर हो कर कह उठता है–'पानी है अनमोल' उसे बचाए रखें। प्राकृतिक संपदा का संरक्षण करने तथा हमारी गौरवमयी संस्कृति को कायम रखने की जिम्मेदारी निबंधकार पाठकों पर छोडते है पंचतत्व में से एक पानी को बेचना मानव जाति को कलंकित करनेवाली बात है। इसलिए श्रीराम परिहार जी उक्त निबंध के द्वारा हमें भविष्य के प्रति जागृत करते हुए पानी के महत्व को लेकर गंभीर चिंतन करते हुए नजर आते हैं तथा हमसे यह आशा करते हैं कि प्राकृतिक संपदा का संरक्षण करें।

संदर्भ

निबंध सौरभ– संपा. प्रा. सौ. उमा जाधव, परंपरा पब्लिकेशन–दिल्ली, संस्करण २०१०, पृ.१५

हिंदी के प्रतिनिधि निबंधकार–डॉ. द्वारिकाप्रसाद सक्सैना, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा २, तृतीय संस्करण–१९९३, प्राक्कथन

निबंध वैभव– संपा. प्रो. डॉ.सदानंद भोसले, परिदृश्य प्रकाशन, मुंबई, प्रथम संस्करण–२०१९, पृ. ६७

वही, पृ. ६८

वही, पृ. ६८